मानवीय एवं सांस्कृतिक मूल्यों पर लौटने की जरूरत

अभी हाल के वर्षों में जब खुशी या सुखानुभूति को सरकारों ने विकास का एक पैमाना मानना प्रारंभ किया तो फिर से विकास के वारे में पुरानी धारणायें तथा मापदंड बदलने लगे। विकास का पैमाना भारतीय संदर्भ में नया नहीं है। सुखानुभूति, आनंद खुशी यह सब विकास का ही अंतिम लक्ष्य था। आजादी के बाद दुनिया में जो लोग विकास को बाजार, संसाधन और राज्य के साथ समवेत करके सोचते थे और उसे ही विकसित होने का पैमाना मान रहे थे, उनके कारण भारत भी विकास की उस दौड़ में शामिल हो गया था। विकास का निर्देशक उन दिनों से अब तक वही संयुक्त राष्ट्र और उसके साथ विकसित किये गये वित्तीय संस्थान हैं। उनके पैमाने लगातार बदलते रहे हैं। बदलने का कारण भी यही था कि जो लक्ष्य निर्धारित किये जा रहे थे वे सब मृग मरीचिका की तरह पकड़ में आने के बजाये आगे बढ़ जाते थे। पत्रकारिता भी विकास को उसी अवधारणा के आधार पर बताती और समझाती रही है।

अब समझ में आ रहा है कि विकास का आशय न तो इमारतें खड़ी करना है, न ही लोगों के लिए केवल संसाधनों की उपलब्धता, विकास है। लोगों की व्यक्तिगत समृध्दि और समाज का आधुनिकतम होना दरअसल सुख, शांति, सुव्यवस्था, लोगों के बीच सहयोग, प्रेम, भाईचारा आदि के लिए ही है। इस बात को सभी विकास के पुरस्कर्ता मानते हैं। विकास के मानवीय संकेतकों में भी यह माना गया है कि विकास के लिए किये जाने वाले कार्यों का प्रभाव व्यक्ति के जीवन में दिखाई देना चाहिये। वह स्वस्थ हो मन और तन से। दुनिया में जितने भी समाज हैं, आदिम से लेकर आधुनिकतम तक वे सब इसी मन्तव्य को विकास मानते हैं। अफ्रीका और लातीनी अमेरिका के अविकसित देशों से लेकर यूरोप-अमेरिका के विकसित देश भी विकास का यही अर्थ लेते हैं। तब विकास के कार्यों का मानवीय मूल्यों से अधिक संबंध होना चाहिये। उनके कार्यों से लोगों में आपसी प्रेम और सहयोग बढ़े। वे एक दूसरे से नफरत न करें। हिंसा और व्यभिचार का रोग उनके मनों में नहीं रहे। वे अपने देश में रहते हुए, दुनिया भर के लोगों से प्यार और सहयोग करें। यह संसाधनों की स्पर्धा, बाजार के विकास और उत्पादन से न होकर जो कुछ किया जा रहा है उसको संतुष्टि और सुखानुभूति के पैमाने से देखना होगा। सांस्कृतिक मूल्यों के विकास और व्यवहार के लिए पूंजी से अधिक मानवीय व्यवहारों की संवृद्धि जरूरी होगी। उसके लिए कितने अरबपति बढ़े हैं, यह बताने के बजाये अब कोई पीछे नहीं है, अब कोई असमर्थ नहीं है, अब कोई दुखी या पीड़ित नहीं है, ऐसी व्यवस्था करते हुए बताना होगा।

इस सबके लिए विकास के सभी चिंतको, प्रशासकों, मीडिया अध्येताओं तथा मीडिया कर्मियों को विकास के संबंध में वर्तमान विकास की सोच को पूरी तरह बदलना होगा। विकास के केन्द्र में मनुष्य के कल्याण को रखते हुए उन सांस्कृतिक मूल्यों के साथ समृध्दि यानि ग्रोथ के उपाय करने होंगे जिससे समृध्दि सांस्कृतिक मूल्यों की संगति में रहे, उसकी विरोधी न हो। इस संबंध में बाजार से अधिक आशायें नहीं रखनी चाहियें। वह अपने मुनाफे की जोखिम उठाकर समाज कल्याण नहीं करना चाहेगा। इसे ताजे संदर्भों में कल्याणकारी कार्यों में मुनाफे की एक निश्चित राशि लगाये जाने के निर्णय की मीमांसा करते हुए देखा समझा

जा सकता हैं। राजनैतिक दलों का एजेंडा सिध्दांत में तो समाज का कल्याण है पर यह कल्याण सत्ता के साथ ही है। वे जब सत्ता में होते हैं तब प्राय: उन सब कदमों के साथ नहीं होते जो लोग चाहते हैं, या प्रकारांतर से उनके विरोधी चाहते हैं। उनका कल्याण के लिए संघर्ष सत्ता प्राप्ति का मुखौटा है। प्रशासन के नियम और पद्धतियां लोगों के लिए होती हैं ऐसा कहा तो जाता है पर लोग उनमें प्राथमिकता नहीं पाते। नियमों के लिए लोग होते हैं, लोगों के लिए नियम हों तो उनमें लचीलापन करना होगा। वह लचीलापन या तो स्वार्थ की भेंट चढ़ता है या फिर होता ही नहीं है। हां, मीडिया से आशा की जा सकती है क्योंकि लोक जागरण, लोगों का उन्मुखीकरण या लोकचेतना उनका मूल लक्ष्य है। वे ऐसे उत्प्रेरक हो सकते हैं जिनके सहारे लोग अपने भविष्य को अपनी आकांक्षाओं के सहारे गढ़ सकते हैं। पर पिछले दो दशकों से वह भी मुनाफे की बाढ़ में बहकर पूरा व्यवसायी हो गया है। ऐसे में उन कुछ पत्रकारों या समाचारपत्रों को याद किया जा सकता है जो मुनाफे के प्रवाह के विपरीत अपने अस्तित्व की परवाह न करते हुए भी भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों में वर्णित भाईचारे और मानवीय मूल्यों की स्थापना के लिए कार्य कर रहे हैं। हां उनकी संख्या बहुत कम है।

अभी हाल ही में स्वदेश ने अपनी पत्रकारिता परम्परा के संबंध में एक संगोष्ठी भोपाल में आयोजित की जिसमें भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर समाज की रचना के लिए समाचार पत्रों की भूमिका पर केवल बात ही नहीं की गई वरन संगोष्ठी के बाद उस तरह की कार्य योजना का भी संकल्प लिया गया। बताया जाता है कि उनमें लगभग दो दर्जन समाचारपत्रों में भाग लेकर उस संकल्प के साथ अपने को जोड़ा हैं। यह कहना अभी जल्दबाजी होगा कि उसका प्रभाव क्या हुआ है। इतना तो कहा ही जा सकता है कि भले ही वे सबसे अधिक प्रसार वाले न हो पर वे उस आवश्यकता को तो स्वर दे रहे हैं जो समय और पत्रकारिता की पुकार है। इस सब के साथ पाठक यानि लोग यदि शामिल हो जायें तो मुनाफे के लिए सब तरह का समझौता करने की स्पर्धा वाले मीडिया को भी अपना चेहरा उजला रखने के लिए उसमें शामिल होना बाध्यकारी होगा। इस पूरे विमर्श का कारण यही है कि सांस्कृतिक मूल्यों का उत्स समाज की उन परम्पराओं में होता है जिनमें वह आपस में जुड़ा रहकर अपना विकास करता है। एक अर्थ में सांस्कृतिक मूल्यों का उत्स आध्यात्म में है। आध्यात्म व्यष्टि को समष्टि में देखने, समझने और अनुभूत करने का आधार है। यह व्यक्ति को पूरे समूह, पूरे समाज और पूरे विश्व को कल्याणकारी भावों से जोड़ता है और सब में समाये हुए की अनुभूति करता है। उसका मन कल्याणकारी संकल्प यानि विचार-व्यवहार का होता है और वह सभी के विचारों को आत्मसात करते हुए समानाभूति से अपने सामाजिक व्यवहार की रचना करता है। ऐसा विकास संसाधनों के साथ मानवीयता का भी होता है। तब स्पर्धा नहीं होती सहयोग और भाईचारा होता है। इसे अभी वायवी माना जा सकता है पर ऐसा होना असंभव नहीं है। सभी समाजों में स्वर्ग या सतयुग की कल्पना कहीं न कहीं उनके अवचेतन से ही तो आई हुई है जो सच रही होगी। जो सच रहा है, वह सच हो भी सकता हैं।

****